

**International Journal of Innovative Research in Science,
Engineering and Technology**

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 7, Issue 8, August 2018

वैदिक काल व मध्य काल में भारतीय महिलाओं की स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. सुमन ढाका

सह-आचार्य, इतिहास, प्रतिनियुक्ति राजस्थान पुलिस अकादमी, जयपुर

सार

महिलाओं और बच्चों की स्थिति केवल किसी भी देश या समाज के विकास संकेतकों के लिए स्पष्ट है। क्योंकि बच्चा देश का भविष्य है, महिला उसकी पहली शिक्षिका है, उसका पालन पोषण और मार्गदर्शन करती है, लेकिन वर्तमान समय में सभी प्रयासों के बावजूद, देश में महिलाओं और बच्चों की स्थिति बहुत चिंताजनक है। वर्तमान में, संयुक्त राष्ट्र या यूनिसेफ जैसे अंतर्राष्ट्रीय संगठन, जो अशिक्षा, गरीबी और गरीबी के कारण अभी भी कुपोषित रह रहे हैं, ने बच्चों के स्वास्थ्य और उनकी शिक्षा के महत्व पर चिंता व्यक्त की है। शिक्षा किसी भी देश में परिवर्तन या क्रांति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जब हम वैदिक काल को देखते हैं, तो हजारों साल पहले का समाज भी अधिक प्रगतिशील दिखाई देता है। जो जीवन को निरर्थक नहीं मानता है, लेकिन वह प्रवृत्ति-प्रधान है जो जीवन के प्रति आशावादी और मेहनती है। उनकी प्रार्थनाएं ऐसी हैं जो पुरुषों के भीतर उत्तेजना पैदा करती हैं, उनकी प्रार्थना लंबे जीवन, स्वस्थ शरीर, जीत, खुशी और समृद्धि के लिए प्रार्थना की गई थी। वैदिक काल में, समाज में रहने वाली हर जाति, वर्ग, वर्ग और महिला को भी हर क्षेत्र में पर्याप्त स्वतंत्रता मिली। वैदिक समाज में हमें पर्याप्त सामाजिक गतिशीलता देखने को मिलती है। यही कारण है कि वैदिक युग की महिलाएं अभी भी महिलाओं के लिए आदर्श बनी हुई हैं। जब हम वैदिक काल के समाज में महिलाओं की स्थिति का अध्ययन करते हैं, तो यह ज्ञात है कि परंपरागत रूप से भारत के इतिहास में, महिलाओं की स्थिति दुनिया के अन्य हिस्सों की तुलना में अधिक थी।

मध्यकालीन भारत में शिक्षा ज्यादातर विदेशी आक्रमणों से प्रभावित थी। इन विदेशी विजयों के परिणामस्वरूप मध्ययुगीन काल में महिलाओं की स्थिति में गिरावट आई। भारत में महिला साक्षरता दर पुरुष साक्षरता दर से कम थी। मध्यकालीन भारत में महिला शिक्षा को बहुत नुकसान हुआ। प्राचीन भारतीय ग्रंथों में महिलाओं को समाज के कमजोर वर्गों के रूप में वर्णित किया गया है। उन्हें शारीरिक और सामाजिक दोनों रूप से कमजोर माना जाता था। इस प्रकार, यद्यपि वैदिक काल में महिलाओं को समान अधिकार दिए गए थे, लेकिन समय के साथ उनकी स्थिति बिगड़ती गई। मध्ययुगीन समाज असमानताओं के अधीन थे और उन पर भी अत्याचार किया गया था। मध्यकालीन भारत में, महिलाओं को 'पर्दा' (एक घूंघट) प्रणाली से परिचित कराया गया था। इसके अलावा समाज में कई बुराइयों की शुरुआत हुई। बाल विवाह, सती, जौहर जैसी सामाजिक कुरीतियां मध्यकालीन भारत में महिला शिक्षा पर प्रतिबंध थीं। फिर भी दक्षिण भारत में महिलाओं की स्थिति उत्तर भारत की तुलना में कहीं बेहतर थी। मध्यकालीन भारत में महिला शिक्षा दक्षिण भारत में देखी गई। हिंदू धर्म और बौद्ध धर्म जैसे अन्य धर्मों ने महिलाओं को स्वतंत्रता दी। उन्हें शिक्षा की स्वतंत्रता दी गई और उन्हें अधिक उदार दृष्टिकोण की पेशकश की गई। मध्य युग के दौरान भारतीय महिलाओं की दुर्दशा बहुत तीव्र थी। मध्यकाल में मुसलमानों के आने से भारत में महिलाओं की परेशानी और बढ़ गई। मुस्लिम महिलाओं को समान शिक्षा प्राप्त करने से रोका गया। मध्यकालीन भारत में महिला शिक्षा धर्म के कारण मुस्लिम महिलाओं के बीच प्रतिबंधित थी।

मध्यकाल में कई महिलाओं ने कला, साहित्य, संगीत में उत्कृष्ट प्रदर्शन किया। मध्यकाल में महिलाओं ने शासकों के रूप में भी कार्य किया। मध्य युग में दिल्ली के सिंहासन पर शासन करने वाली रजिया सुल्तान एकमात्र महिला सम्राट थीं। मुगल सम्राट अकबर के सेनापति आसफ अली से लड़ाई हारने से पहले गोंड रानी दुर्गावती ने पंद्रह वर्षों तक शासन किया।

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 7, Issue 8, August 2018

परिचय

वेदों में स्त्री का महत्व, वैदिक काल में स्त्री शिक्षा, शिक्षा में स्त्री की स्थिति, विवाह के संदर्भ में स्त्री की स्थिति, सार्वजनिक जीवन में स्त्री की भूमिका, वैदिक काल में स्त्री की स्थिति की प्रासंगिकता। महिलाओं और बच्चों की स्थिति केवल किसी भी देश या समाज के विकास संकेतकों के लिए स्पष्ट है। क्योंकि बच्चा देश का भविष्य है, महिला उसकी पहली शिक्षिका है, उसका पालन पोषण और मार्गदर्शन करती है, लेकिन वर्तमान समय में सभी प्रयासों के बावजूद, देश में महिलाओं और बच्चों की स्थिति बहुत चिंताजनक है। वर्तमान में, संयुक्त राष्ट्र या यूनिसेफ जैसे अंतर्राष्ट्रीय संगठन, जो अशिक्षा, गरीबी और गरीबी के कारण अभी भी कुपोषित रह रहे हैं, न बच्चों के स्वास्थ्य और उनकी शिक्षा के महत्व पर चिंता व्यक्त की है। शिक्षा किसी भी देश में परिवर्तन या [1,2] क्रांति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। लेकिन तमाम प्रयासों के बावजूद माध्यमिक विद्यालयों के प्रवेश में हमारी स्थिति बहुत खराब है। हम इस मामले में केवल अफगानिस्तान और भूटान से बेहतर हैं। 2011 के अनुसार महिला साक्षरता की दर 65.46 प्रतिशत है, फिर भी हम वैश्विक अनुपात 79.07 प्रतिशत से पीछे हैं। 83.5 प्रतिशत पर स्कूल छोड़ने की दर बेहद अधिक है। यह भारतीय समाज के लिए बहुत चिंताजनक है क्योंकि हम उस समाज में रह रहे हैं जहां बच्चों की परवरिश की जिम्मेदारी काफी हद तक मां की होती है। ऐसे में हम अपनी आने वाली पीढ़ी को तब क्या देंगे जब माँ अनपढ़ होगी। यह इस कारण से है कि हमने अपनी नई शिक्षा नीति का एक उद्देश्य निर्धारित किया है कि - “शिक्षा का उपयोग महिलाओं के मानक में सुधार के लिए किया जाएगा। राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली महिलाओं के सशक्तीकरण में एक सकारात्मक हस्तक्षेप करेगी। “ फिर भी, हमने अभी तक महिलाओं की शिक्षा के क्षेत्र में कई बाधाओं को पार नहीं किया है।

उपरोक्त कथन यह बताने के लिए पर्याप्त है कि नारी ज्ञान समाज के उत्थान में महिलाओं की शिक्षा कितनी महत्वपूर्ण है। जहां आधुनिक समाज और स्वतंत्रता के इतने वर्षों के बाद भी, हम पुरुषों के समान ही महिला शिक्षा में 100 प्रतिशत दूरी तक नहीं पहुँच पाए हैं। जब हम वैदिक काल को देखते हैं, तो हजारों साल पहले का समाज भी अधिक प्रगतिशील दिखाई देता है। जो जीवन को निरर्थक नहीं मानता है, लेकिन वह प्रवृत्ति-प्रधान है जो जीवन के प्रति आशावादी और मेहनती है। उनकी प्रार्थनाएं ऐसी हैं जो पुरुषों के भीतर उत्तेजना पैदा करती हैं, उनकी प्रार्थना लंबे जीवन, स्वस्थ शरीर, जीत, खुशी और समृद्धि के लिए प्रार्थना की गई थी।[3,4]

वैदिक काल में, समाज में रहने वाली हर जाति, वर्ग, वर्ग और महिला को भी हर क्षेत्र में पर्याप्त स्वतंत्रता मिली। वैदिक समाज में हमें पर्याप्त सामाजिक गतिशीलता देखने को मिलती है। यही कारण है कि वैदिक युग की महिलाएं अभी भी महिलाओं के लिए आदर्श बनी हुई हैं।

यद्यपि ऋग्वेदिक काल में विधवा विवाह के कोई स्पष्ट उदाहरण नहीं हैं, लेकिन नियोग प्रथा के उदाहरणों से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि नियोग प्रथा द्वारा पुत्र प्राप्त करने के बाद कई विधवाएँ अपने साले और अन्य पुरुषों के साथ स्थायी रूप से रहती थीं पति और पत्नी लेकिन विधवाओं के पुनर्विवाह को वैदिक काल के बाद किसी भी तरह से अपमानजनक नहीं माना जाता था। यदि ऐसा हुआ होता, तो पत्नी और दूसरे पति के बीच के रिश्ते को मजबूत बनाने की रस्म अथर्ववेद में वर्णित नहीं होती। सती प्रथा इस समय मौजूद नहीं थी। विधवा पुनर्विवाह या रोजगार के द्वारा बच्चे पैदा कर सकती थी।

नियोग द्वारा इसका अर्थ है कि यदि कोई महिला विधवा हो जाती है या उसका पति बच्चे पैदा करने में असमर्थ होता है, तो महिला को अपने पति के भाई या अन्य करीबी रिश्तेदारों के साथ सहवास करके बच्चे पैदा करने की अनुमति होती है।

पुरुकुत्सनी अपने पति की अनुपस्थिति में पुत्र प्राप्ति का उल्लेख करती है।

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 7, Issue 8, August 2018

इस समय एक विधवा की सबसे बड़ी अयोग्यता यह थी कि उसके पास संपत्ति के अधिकार नहीं थे, वह अपने मृत पति की संपत्ति को प्राप्त नहीं कर सकती थी, लेकिन विवाह और पुनर्विवाह की प्रथा इतनी प्रचलित थी कि वह संपत्ति जिसे वह मृत्यु पर प्राप्त नहीं कर सकती थी उसके पति को दिया गया था। पैदा होने से, वह अपना संरक्षक रूप प्राप्त कर सकती थी। [5,6] वैदिक काल में, उन्हें पुत्र की तरह उपनयन और शिक्षा का अधिकार था। ऋग्वेद में एक स्थान पर मौजूद मेहमानों को नवविवाहित दुल्हन को देखने के लिए कहा गया है। एक अन्य स्थान पर, दुल्हन को बैठक में विश्वास के साथ बोलने की उम्मीद है। यदि उस समय समाज में पर्दा प्रथा थी, तो यह सब संभव नहीं था।

इतिहास के प्रारम्भिक रूप को देखने से ज्ञात होता है कि शुरू से ही नारी परिवार का केन्द्र बिन्दु रही है। उन दिनों परिवार मातृसत्तात्मक था। खेती की शुरूआत तथा एक जगह बस्ती बनाकर रहने की शुरूआत नारी ने ही की थी, इसलिए सभ्यता और संस्कृति के प्रारम्भ में नारी है किन्तु कालान्तर में धीरे-धीरे सभी समाजों में सामाजिक व्यवस्था मातृ-सत्तात्मक से पितृसत्तात्मक होती गई और नारी समाज के हाशिए पर चली गई। आर्यों की सभ्यता और संस्कृति के प्रारम्भिक काल में महिलाओं की स्थिति बहुत सुदृढ़ थी। ऋग्वेद काल में स्त्रियां उस समय की सर्वोच्च शिक्षा अर्थात् बृहज्ज्ञान प्राप्त कर सकती थीं। ऋग्वेद में सरस्वती को वाणी की देवी कहा गया है जो उस समय की नारी की शास्त्र एवं कला के क्षेत्र में निपुणता का परिचायक है। अर्द्धनारीश्वर की कल्पना स्त्री और पुरुष के समान अधिकारों तथा उनके संतुलित संबंधों का परिचायक है। वैदिक काल में परिवार के सभी कार्यों और भूमिकाओं में पत्नी को पति के समान अधिकार प्राप्त थे। नारियां शिक्षा ग्रहण करने के अलावा पति के साथ यज्ञ का सम्पादन भी करती थीं। वेदों में अनेक स्थलों पर रोमाला, घोषाल, सूर्या, अपाला, विलोमी, सावित्री, यमी, श्रद्धा, कामायनी, विश्वम्भरा, देवयानी आदि विदुषियों के नाम प्राप्त होते हैं। उत्तरवैदिक काल में भी स्त्रियों की प्रतिष्ठा बनी रही। इसके अलावा शासन, सेना, राज्य-व्यवस्था में स्त्रियों के योगदान के प्रमाण मिलते हैं। प्राचीन भारत में महिलाओं की स्थिति से संबंधित दो विचार के सम्प्रदाय मिलते हैं। एक सम्प्रदाय के समर्थकों का कहना है कि महिलायें 'पुरुषों के बराबर' थीं, जबकि दूसरे सम्प्रदाय के समर्थकों की मान्यता है कि महिलाओं का न केवल अपमान ही होता था बल्कि उनके प्रति घृणा भी की जाती थी। वैदिक सूत्रों के आधार पर उक्त काल खण्डों में स्त्री की गौरवपूर्ण एवं सम्मानजनक स्थिति स्वीकार करते हैं तथा परवर्ती सूत्रों में उत्तरवैदिक काल से स्त्रियों की निम्नतर स्थिति के स्पष्ट संकेत मिलते हैं। नारी समाज का वह अंग है जो व्यक्ति और समाज के स्तर पर अनेक भूमिकाओं को एक साथ ही निर्वहित करती है। [7,8] एक ही समय में वह एक से अधिक रूपों में जीवित रहती है और इन विभिन्न रूपों में वह एक साथ ही माता, बहन, पुत्री, प्रेयसी, दोस्त तथा वेश्या तक हो जाती है। वह किसी न किसी रूप में कहानी में अवश्य ही चित्रित होती है। "वास्तव में गृहस्थाश्रम की सफलता नारी पर आधारित है। इसीलिए तो प्राचीनकाल में नारी प्रतिष्ठित पद पर विराजमान थी। मनु ने भी अपने सामाजिक ग्रन्थ 'मनु स्मृति' में लिखा है-

‘यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ।

यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्रफलाः क्रियाः ।’

विचार-विमर्श

वैदिक काल में बेटे और बेटी के सामाजिक और धार्मिक अधिकारों में बहुत अंतर नहीं था। वैदिक शिक्षा प्रणाली और स्वतंत्र और समतावादी समाज का प्रभाव था कि वैदिक काल में कई विद्वानों के छंदों की रचना की गई थी। वैदिक भजनों की रचना करने वाली महिलाओं की संख्या 20 से अधिक है, जो यह बताने के लिए पर्याप्त है कि वैदिक काल की महिलाओं की स्थिति अच्छी थी। ब्रह्मवादिनी ममता लंबे समय तक रहने वाली संत की मां थीं। यह महान विद्वान और ब्रह्म ज्ञानी थे। अग्नि के निमित्त उनका पाठ ऋग्वेदसंहिता के प्रथम मंडल के दसवें सूक्त के श्लोक में मिलता है। अग्नि महर्षि के वंश में पैदा हुए विश्ववारा ने ऋग्वेद के पाँचवें मंडल के अट्ठाईसवें सूक्त में वर्णित छह संस्कारों की रचना की। ब्रह्मवादिनी अपाला ने ऋग्वेद की

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 7, Issue 8, August 2018

अस्सी-आठ मंडलियों के 91 वें सूक्त के एक से सात तक के श्लोकों का संकलन किया है। इसी प्रकार, ब्रह्मवादिनी घोष एक प्रख्यात विद्वान थी। उन्होंने ब्रह्मचारिणी कन्या के सभी कर्तव्यों का उल्लेख दो सूक्तों में दो ब्रह्मचारिणी के रूप में किया है। इस आख्यान का संकेत ऋग्वेद के दसवें मण्डल के 39 वें से 41 वें सूक्त में मिलता है। ब्रह्मवादिनी सूर्या ने ऋग्वेद के विवाह पद्य की रचना की है। जो ऋग्वेद के दसवें मण्डल के 85 वें सूक्त का 47 वाँ भजन है। वैदिक छात्रों के इसी क्रम में, ब्रह्मवादिनी वक्र, जो राजदूत ऋषि की बेटी थी। वह प्रसिद्ध ब्रह्म ज्ञानी थीं और भगवती देवी [9,10] के साथ एकात्मता प्राप्त की। ऋग्वेद संहिता के दसवें मण्डल के 125 वें सूक्त में दंडम देवी सूक्त के नाम से आठ मन्त्रों की रचना हुई है। चंडीपाठ के साथ इन आठ मंत्रों का पाठ बहुत महान माना जाता है। शिक्षा या ज्ञान व्यक्ति में आत्मविश्वास पैदा करता है और उसे उसके अधिकारों और कर्तव्यों से अवगत कराता है। ये सभी तर्क और संवाद में व्यक्त किए गए हैं। पुरुषों और महिलाओं के बीच तर्क और संवाद को प्रगतिशील समाज की निशानी माना जाता है, जो अभी भी कई देशों में नहीं बल्कि विकसित देशों में भी पर्याप्त है। वैदिक युग की विद्वान महिला होने का उदाहरण उनकी विद्वता की बहस में दिखता है। इसी तरह का उदाहरण बुधनारायणक उपनिषद में मिलता है। विदेह के राजा जनक के दरबार में, जहाँ ऋषि याज्ञवल्क्य के साथ वाद-विवाद में अन्य ऋषियों की हार हुई थी, वचक्रवी गार्गी (ऋषि वचरु की पुत्री होने के नाते) से सबसे अधिक तीक्ष्ण प्रश्न आया था, हालाँकि बाद के गार्गी में याज्ञवल्क्य को भी माना जाता था। लोहा होना। याज्ञवल्क्य का यह भी कहना था - “यह एक अतिशयोक्ति है।” गार्गी! यह उत्तर की सीमा है, अब कोई और प्रश्न नहीं हो सकता है। अब तुम मत पूछो, अन्यथा तुम्हारा सिर गिर जाएगा। “प्रस्तुत कथानक गार्गी की पुरानीता और समाज में महिलाओं की स्थिति को दर्शाता है। इस प्रकार की बहस या दार्शनिक बातचीत न केवल अविवाहित महिलाओं द्वारा, बल्कि विवाहित महिलाओं द्वारा भी की जाती थी। मैत्रेयी, ऋषि यज्ञोपवीत की पत्नी जो एक आत्म-विद्वान थीं। मैत्रेयी का दार्शनिक संवाद मानव जीवन की दशा और भौतिक जीवन की सीमाओं पर सवाल बहुत ही सुंदर और गहरा है, यह न केवल प्राचीन भारत के संदर्भ में, बल्कि आधुनिक दुनिया में भी महत्वपूर्ण है। [11,12] नोबेल पुरस्कार विजेता और प्रसिद्ध अर्थशास्त्री अर्मन्य सेन भी। यह मानना है कि याज्ञवल्क्य और मैत्रेयी के संवादों ने उन्हें विकास के बारे में एक अलग दृष्टिकोण दिया, यह विकास एक व्यापक अवधारणा है जिसे केवल जीडीपी और जीएनपी जैसे मानकों से नहीं मापा जा सकता है। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि वैदिक भारत में महिला शिक्षा ने सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

लोगों से अपेक्षा की जाती है कि वे वैदिक युग में सार्वजनिक रैलियों में विश्वास के साथ बोलें। उपरोक्त वाक्य के आधार पर, अल्तेकर का सुझाव है कि यह संभावना थी कि कुछ महिलाएं तत्कालीन जनप्रतिनिधियों की बहसों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थीं, लेकिन बाद के वैदिक काल में, इस क्षेत्र की महिलाओं की स्थिति में गिरावट आई, जैसा कि उल्लेख किया गया है। मैत्रायणीया संहिता। महिलाएं अब सार्वजनिक बैठकों में नहीं गईं

पति के साथ पत्नी की उपस्थिति को धार्मिक कार्यों में आवश्यक माना जाता था, इसलिए महिलाओं का धार्मिक महत्व और भी अधिक बढ़ गया। शतपथ ब्राह्मण में यज्ञ को स्वर्ग के प्रतीक के रूप में वर्णित किया गया है कि यदि पत्नी उसके साथ नहीं है, तो आदमी स्वर्ग नहीं जा सकता है। इसलिए यज्ञ के अवसर पर पत्नी का होना आवश्यक था। मोक्ष की दृष्टि से पुत्र प्राप्ति आवश्यक थी। और एक बेटा केवल एक पत्नी के माध्यम से पैदा हो सकता है, इसलिए धार्मिक दृष्टि से एक महिला के महत्व को नकारा नहीं जा सकता है। उपरोक्त कारणों के कारण, महिला का स्तर किसी भी तरह से पति से कम नहीं था। पत्नी केवल पुरुष की पूरक नहीं थी, बल्कि धार्मिक कार्य की नितांत आवश्यकता थी। उपरोक्त परिस्थितियों ने स्वाभाविक रूप से पत्नी की स्थिति को ऊंचा कर दिया था। [13]

इनके अलावा, कुछ अनुष्ठान थे जो केवल महिलाओं द्वारा किए जा सकते थे, सीता यज्ञ उनमें से एक थी जिसे एक अच्छी फसल होने के लिए किया गया था। वह पशुओं की समृद्धि के लिए अकेले रुद्रबली यज्ञ भी

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 7, Issue 8, August 2018

कर सकता था। महिलाएं शादी में लड़कियों के लिए शुभ कामनाओं के रूप में रुद्रयाग यज्ञ कर सकती हैं। हिंदू संस्कृति में, वैदिक युग के बाद से, पति और पत्नी को घर और उसकी संपत्ति का संयुक्त स्वामी माना जाता है। विवाह के समय, पति को यह वादा करना था कि वह पत्नी को उसके आर्थिक हितों से वंचित नहीं करेगा, लेकिन वैदिक युग में, महिलाओं को शायद पुरुषों के समान संपत्ति अधिकार नहीं मिला था। बाद के वैदिक साहित्य में कई संदर्भ हैं, जो दर्शाते हैं कि महिलाओं को उत्तराधिकार का कोई अधिकार नहीं था, ऋग्वेद के शुरुआती छंदों में, पिता की संपत्ति में भाई के भाई के हिस्से को स्वीकार किया गया था। वैदिक युग में, बेटों पर अधिक जोर दिया गया था।

ऋग्वेद में एक श्लोक में एक बड़ी अविवाहित महिला का उल्लेख है जो पैतृक संपत्ति में अपने हिस्से का दावा करती है। लेकिन महिलाओं की शादी आमतौर पर होती थी और पैतृक संपत्ति में कोई हिस्सा नहीं मिलता था, तब ऋग्वेद में, एक वैदिक लेखक ने भाई को सलाह दी कि उसे अपनी बहन को कोई हिस्सा नहीं देना चाहिए क्योंकि अंततः उसे दूसरे परिवार में जाना पड़ा।

अर्थात् जिस कुल में स्त्रियों की पूजा होती है, उस कुल पर देवता प्रसन्न होते हैं और जिस कुल में स्त्रियों की पूजा, वस्त्र, भूषण तथा मधुर वचनादि द्वारा सत्कार नहीं होता है, उस कुल में सब कर्म निष्फल होते हैं। उपनिषदों में भी कहा गया है, "सृष्टि की सम्पूर्ण रिक्तता की पूर्ति स्त्री से मानी गयी है।" 2 मानव जीवन के सर्वतोन्मुखी विकास में नारी की अहम भूमिका रही है। जिसने बृहदरूपेण समाज का चतुर्दिक् विकास किया है। नारी की स्थिति उसकी आर्थिक प्रगति राजनितिक सक्रियता तथा उसके वैचारिक आदर्शों से निरंतर प्रभावित होती रही है। महाभारत काल में नारी के अधिकार पहले जैसे नहीं रहे। वर्ण व्यवस्था में भी कठोरता आई तथा नारी घर-ग्रहस्थी तक सीमित रहने लगी। बहुपत्नी व्यवस्था और अनुलोम विवाह के कारण नारी उपभोग की वस्तु बनने लगी। तप, त्याग, नम्रता, धैर्य आदि पतिव्रत धर्म का पालन करना उनके प्रमुख लक्ष्य माने गये। पति के मनमाने अधिकार का ज्वलंत उदाहरण द्रौपदी और सीता बनीं। किशोरियों को शिक्षा से वंचित रखा जाने लगा। बहु-विवाह एवं बाल विवाह होने लगे, विधवाओं की संख्या बढ़ने लगी। विधवा-विवाह पर प्रतिबंध लग गया। पतिव्रत धर्म सर्वोच्च बन जाने के कारण विधवा का जीवन नरक हो गया, परिणामस्वरूप सती प्रथा का जन्म हुआ। [14,15]

मध्ययुग में डावांडोल राजनैतिक स्थिति का प्रभाव देश की सामाजिक, आर्थिक स्थितियों पर पड़ा। लगातार विदेशी आक्रमणों एवं भिन्न सांस्कृतिक परिवेश के साथ भारत में इस्लाम के आक्रमण ने पहले संघर्ष फिर सांस्कृतिक परिवर्तन के लिए जमीन तैयार की। स्त्रियों की स्थिति में भी परिवर्तन आया। मुसलमानों के वर्चस्व का जितना असर पुरुषों की स्थिति पर दिखायी देता है, स्त्रियों की अधीनस्थ की भूमिका ने उसे क्रमशः अवनति की ओर अग्रसर किया। भारत के मध्यकाल में स्त्रियों के अगाध पण्डिता होने के दृष्टांत भी पाये जाते हैं। स्त्री का यह युग भारत के इतिहास का "स्वर्णिम युग" कहा जा सकता है। इस युग के आते ही स्त्री के दिव्य गुण धीरे-धीरे उसके अवगुण बनने लगे, साम्राज्ञी से वह धीरे-धीरे आश्रिता बन गयी। जो स्त्रियां वैदिक युग में धर्म और समाज का प्राण थीं, उन्हें श्रुति का पाठ करने के अयोग्य घोषित किया गया। वैदिक युग का दृष्टिकोण स्त्री के प्रति दिव्य कल्पनाओं तथा पुनीत भावनाओं से परिवेष्टित था, जो धीरे-धीरे पूर्णतया बदल चुका था। यह युग तो जैसे स्त्रियों की गिरावट का युग था। "उनके मानसिक तथा आत्मिक विकास के द्वारों पर ताले लगा दिए गये। उनकी साहित्यिक उन्नति के मार्ग पर अनेकों प्रतिबंध लगा दिए गये। 'स्त्री शूद्रो नाधीताम्' जैसे वाक्य रचकर उसे शूद्र की कोटि में रख दिया।" 3 स्त्री को विवाह संस्कार के अतिरिक्त और सभी संस्कारों से वंचित कर दिया। सनातन, वैदिक काल के उच्च, सुदृढ़ आदर्शों की इमारत ढह चुकी थी। फिर पुरुष ने स्त्री को अपनी भोग्य वस्तु बना लिया था, वह पशु के तुल्य पराधीन हो चुकी थी। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि और श्रीरामचरितमानस के रचयिता गोस्वामी तुलसीदास ने कहा है, "ढोल, गंवार, शूद्र, पशु, नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी", तो दूसरे भक्त कवि कबीर ने तो नारी की परछाई से बचने का उपदेश दिया, "नारी की झाई परत अंधा होत भुजंग कबीरा, तिनकी का गति जो नित नारी के संग।" 4 इस काल में धीरे-धीरे बाल-विवाह, पर्दे की बेड़ियां तथा अविद्या का अंधकार नारी समाज के लिए अभिशाप बनने लगे। स्वेच्छाचारिता तथा अमानुषिकता की पराकाष्ठा हो गई थी, क्योंकि आत्मज्ञान में निमग्न पुरुषों ने उसे मोक्ष मार्ग की मुख्य बाधा माना। सभ्य पुरुषों ने स्त्री की चर्चा करना वैषयिकता का लक्षण माना और विरक्तों ने उसका मुखावलोकन करना निषिद्ध माना। विलासियों और कवियों ने उसे विलास की वस्तु समझा। गृहस्थों ने माता, भगिनी तथा कन्या के रूप में उसे देवता, धरोहर माना परन्तु किसी ने भी उसे तुल्य, स्वतंत्र और पराक्रम मानव नहीं माना। [16,17]

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 7, Issue 8, August 2018

मध्यकालीन काव्य में मीरा को छोड़कर अन्य भक्त एवं सन्त कवियों ने नारी की सार्थकता पुरुष वर्चस्ववादी ढांचे में ही सुरक्षित की है। हिन्दी साहित्य में नारी की अस्मिता की पहली आवाज मीरा के काव्य में सुनाई पड़ती है। मीरा के काव्य में एक ओर स्त्री की पराधीनता और यातना की अभिव्यक्ति है तो दूसरी ओर उस व्यवस्था के बंधनों का पूरी तरह निषेध और उससे स्वतंत्रता के लिए दीवानगी की हृद तक संघर्ष भी है। अन्तर्द्वन्द्व, नारी उत्पीड़न, नारी के विरुद्ध अन्याय के विरोधी तेवर, अस्तित्व बोध, समता, चेतना तथा रूढ़िता विरोधी क्रान्ति स्वर परिलक्षित हैं। हर युग में अनेक दृष्टि से नारी का संरचनात्मक योगदान जहां सर्वथा सराहनीय रहा है, वहीं इस युग में भी सुभद्रा कुमारी चौहान, तोरन देवी, शुक्ल लली, सुमित्रा कुमारी सिन्हा आदि जिन्होंने स्त्री को अपनी आवाज दी। मध्यकाल में सैकड़ों बार पुरुषों के हाथ से जाती हुई बाजी को पुनः हस्तगत करने में उन्होंने अदम्य उत्साह एवं साहस का परिचय दिया। अंग्रेजों की साम्राज्य-पिपासा ने जब फ्रांस देश का राज्य हड़प लिया, तो स्वदेश फ्रांस को उनके डरावने मुख से साबित बाहर निकाल लाने वाली वीर रमणी देवी जोन का नाम उल्लिखित है।⁵ मध्यकालीन नारी कुसंस्कारों में पली हुई, परम्परा के बन्धनों में सीमाबद्ध, अशिक्षित दृष्टि बिन्दु, गृह की क्षुद्र सीमा में ही केन्द्रित रहा है। इतिहास तथा साहित्य में इसके अपवाद भी हैं, पर जनसामान्य में नारी निश्चित सीमाओं, आदर्शों, रेखाओं पर इच्छा अथवा अनिच्छा से चली है। उसके अशिक्षित मस्तिष्क कुसंस्कारों से पूर्ण हृदय पर नियामकों ने आदर्श का भार लादने का प्रयास किया है। बौद्धिकता तथा तर्क-वितर्क की भावना रहित नारी के सरल हृदय ने इन आदर्शों को अपने जीवन पथ का ध्रुवतारा समझा। इन आदर्शों, एक पक्षीय पवित्रता तथा पतिव्रत को उसने सदा ही शिरोधार्य किया है। इन आदर्शों की उपलब्धि के प्रयास में उसे विस्मृत हो गया कि उसके पग श्रृंखलाबद्ध हैं, अतः वह पतित भी हुई। मानुषी तथा अमानुषी शक्तियों के संघात से उसका अपकर्ष हुआ। निरीह सरल विश्वास से उसने पुरुष को आत्मसमर्पण कर दिया तथा पति को ही परमेश्वर माना। फलतः मध्ययुग की नारी पुरुष के इंगित पर नृत्य करने वाली काष्ठ-पुत्तलिका मात्र रह गयी। उसमें चेतनता तथा व्यक्तित्व का अभाव रहा। भक्तिकाल में नारी के भौतिक और अध्यात्मिक दोनों प्रकार के सौन्दर्य की अनुभूति हुई है। नारियों के शारीरिक और मानसिक सौन्दर्य का निरूपण किया गया है।

“नारी सौन्दर्य की उदात्तता, उसके तीनों रूपों- माता, पत्नी और कन्या में भक्तिकाल के कवियों ने अंकित की है। ज्ञानमार्गियों के लिए माता परमात्मा स्वरूप भी है अथवा कहना चाहिए कि उन्होंने माता में परमात्मा की विशेष स्थापना देखी है।”⁶ सन्तों और भक्तों ने अपनी वैराग्यपूर्ण वृत्ति से प्रेरित होकर उसे ‘सर्पिणी’ और ‘भव-बन्धन’ का मुख्य कारण बताया। तुलसी जैसे समन्वयात्मक दृष्टि सम्पन्न कवि ने उसे माता और जीवन की सच्ची सहधर्मिणी के रूप में भी चित्रित किया। मध्ययुग के वैभवपूर्ण भौतिक वातावरण में नारी के प्रति एक विशेष प्रकार के दृष्टिकोण का आविर्भाव हो जाना कोई आश्चर्यजनक बात नहीं थी। भारतवर्ष में नारी की निन्दा और प्रशंसा दोनों बातें पाई जाती हैं। एक ओर सन्तों ने उसे काम-स्वरूपा जानकर उसकी निन्दा की है, तो दूसरी ओर भारतवर्ष में ही यह भी कहा गया है^[18,19] कि जहां स्त्रियों का आदर होता है, वहां देवता विचरण करते हैं। स्त्री के सम्बन्ध में मीरा का दृष्टिकोण अन्य भक्तिकालीन कवियों में एकदम अलग है। सामन्ती समाज व्यवस्था ने स्त्री को सिर्फ तीन नाम दिए हैं-पत्नी, रखैल एवं वैश्या और उसे सिर्फ दो रूपों में देखा है-देवी तथा दासी। मीरा ने स्त्री के इन सब परंपरागत रूपों को अस्वीकार किया है। मीरा की कविता में सामन्ती समाज और संस्कृति की जकड़न से बेचैन स्त्री-स्वर की मुखर अभिव्यक्ति हुई है। उनकी स्वतंत्रता की आकांक्षा जितनी अध्यात्मिक है, उतनी ही सामाजिक भी। आज स्त्री-विमर्श के बुलन्द नारे के बीच मीरा का व्यक्तित्व एवं उनका काव्य किस प्रकार प्रासंगिक हो सकता है, यह विचरणीय है। “सूरदास ने माता यशोदा के मखन समान स्नेह, आत्मत्याग और निःस्पृह वात्सल्य का जो चित्र प्रस्तुत किया है, वह मधुरता के साथ उदात्त है।”⁷ वहीं तुलसीदास ने “माता को परमाभिवंधा कहा है, जिसका स्थान पिता की अपेक्षा अत्युच्च है।”⁸ नारी हृदय कोमलता, दया, सहानुभूति और स्नेह की सजीव प्रतिमा है। कार्यिं, रूपों और स्थितियों के अनुसार नारी के अनेक नाम भारतीय साहित्य में प्रचलित हैं, जिससे नारी के विभिन्न स्वरूपों का बोध होता है। “नर के धर्म वाली या नर के संबंध होने के कारण उसका ‘नारी’ नाम पड़ा। इस शब्द से सृष्टि के एक-एक प्राणी विशेष का रूप सामने आता है और यह भक्तिकाल में प्रायः उसी अर्थ में प्रयुक्त भी होता था, जिस अर्थ में आजकल साधारणतया: ‘मादा’ शब्द का प्रयोग होता है।”⁹

मध्यकाल में कन्या जन्म के अशुभ माने जाने के संकेत मिलते हैं। सदैव लड़कियां पैदा करने वाली स्त्री को घृणा से देखा जाता था। स्त्री को कुछ सम्मान पुत्र की माता बनने पर मिलता था। परन्तु इस्लाम के भारत में आने के बाद सुरक्षा, विवाह, दहेज आदि प्रश्नों ने कन्या जन्म को सामाजिक अप्रतिष्ठा का विषय बना दिया। अतः कन्या शिशु हत्या की परम्परा प्रारम्भ हुई। स्त्रियों की सुरक्षा व अप्रतिष्ठा के प्रश्न ने कन्या शिशु हत्या के आंकड़ों में वृद्धि की। ‘अमीर खुसरो’ इसीलिए कहते हैं, “मैं चाहता था कि तुम्हारा जन्म ही

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 7, Issue 8, August 2018

नहीं होता और यदि होता भी तो पुत्र के रूप में। कोई भाग्य का विधान नहीं बदल सकता, परन्तु मेरे पिता ने एक स्त्री से जन्म लिया और मुझे भी तो एक स्त्री ने ही पैदा किया था।”¹⁰

परिणाम

संभव समाज में महिलाओं का सम्मानजनक स्थान था। महिलाओं ने पुरुषों के साथ धार्मिक और सामाजिक समारोहों में समान रूप से भाग लिया। उनका मुख्य काम बाल-पालन और गृहस्थी में था। महिलाएं अतिरिक्त समय में सूत कातती थीं। इस बात की पुष्टि संध्या काल की खुदाई के दौरान हर घर से प्राप्त कताई से हुई है। उस समय पर्दा प्रथा भी लोकप्रिय नहीं थी। जब हम वैदिक काल के समाज में महिलाओं की स्थिति पर विचार करते हैं, तो यह ज्ञात है कि परंपरागत रूप से भारत के इतिहास में, महिलाओं की स्थिति दुनिया के अन्य हिस्सों की तुलना में अधिक थी। भारतीय धर्म को छोड़कर, दुनिया में कोई भी धर्म एक महिला को इतनी प्राथमिकता नहीं देता है। इसका एक सुंदर उदाहरण हिंदू विवाह प्रणाली है। भारतीय हिंदू संस्कृति में विवाह को एक धार्मिक कार्य माना जाता है। विवाह में कन्यादान कन्या पक्ष की ओर से किया जाता है जिसमें दिखाया जाता है कि लड़का पक्ष याचिकाकर्ता है और लड़की पक्ष दाता है और दानदाता पक्ष हमेशा याचिकाकर्ता से बड़ा होता है। [20,21] इस प्रकार का एक और उत्कृष्ट विचार शास्त्रों में पाया गया है कि भगवान ने इस दुनिया के दो हिस्सों को एक पुरुष और एक अन्य महिला में विभाजित किया है, अर्थात् महिला और पुरुष को समान स्थान देना। इसके अलावा, अर्धनारीश्वर की कल्पना की गई है, यह कहा जाता है कि मानव जीवन पुरुषों और महिलाओं के मिलन से विकसित हुआ है। यह यह भी इंगित करता है कि पुरुष और महिला पूरी तरह से समान हैं और उनमें एक के गुण दूसरे का दोष नहीं हो सकते।

उपर्युक्त कथन यह साबित करते हैं कि वैदिक कालानुसार समाज एक प्रगतिशील, आशावादी समाज था जहाँ पुरुष और महिला को समान दर्जा प्राप्त था। प्रगतिशील शिक्षा प्रणाली वैदिक युग की प्रगति के लिए जिम्मेदार थी। प्राचीन शिक्षा का उद्देश्य शिष्य का सर्वांगीण विकास करना, उसकी ज्ञान ज्योति को जगाना, उसे दृढ़ बनाना और उसके जीवन को पूरी तरह से भाग्यशाली बनाना था। व्युत्पत्ति (सुमति, विवेक) को विद्या के साथ भी समन्वित किया जाना चाहिए, इसलिए कहा जाता है कि धी (विवेक) सरस्वती के साथ होना चाहिए। यह यहाँ है कि तर्क, तर्क आधुनिक सभ्यता का आधार है जो वैदिक सभ्यता में परिलक्षित होता है। वेदों में यह भी कहा गया है कि एक साधारण शिक्षा या मुक्ति का अर्थ है कि व्यक्ति एक व्यक्ति को उदार बनाता है। संभवतः यही कारण था कि वैदिक काल में बाल विवाह, पर्दा प्रथा और सती प्रथा जैसी बुराईयाँ प्रचलित नहीं थीं। वह त्योहारों और यज्ञों में भाग लेती थी। उसके पास पर्याप्त स्वतंत्रता थी। शिक्षा के महत्व को देखते हुए, वेदों में महिला शिक्षा की पर्याप्त व्यवस्था दिखाई देती है। वेदों में शिक्षा को आश्रम व्यवस्था और सोलह संस्कारों से जोड़ा गया है। औपचारिक शिक्षा की शुरुआत उपनयन संस्कार और इसके साथ ही ब्रह्मचर्य आश्रम से होती है। शिक्षा की शुरुआत उपनयन संस्कार से हुई और समापन संवतारण संस्कार से हुआ। उपनयन संस्कार (जनेऊ पहनना) विद्या का प्रतीक था। इस संस्कार के बाद, शिष्यों और शिष्यों ने वेदों और शास्त्रों का अध्ययन किया। लड़कों की तरह लड़कियों की भी बलि दी जाती थी। वह भी मखमल पहनती थी। छात्राओं को ललित कला सिखाई गई। जिस तरह लड़कों को शादी से पहले ब्रह्मचर्य का पालन करना पड़ता था, उसी तरह लड़कियाँ भी ब्रह्मचारी थीं। उसने एक मेखला भी पहनी थी - हम ऊपर के अर्थवेद, ब्रह्मचर्य कन्या युवनाम विंदते पतिम् (11.5.17) में भी उल्लेख करते हैं। बच्चों ने स्नातक स्तर पर शादी की, कुछ आजीवन ब्रह्मचारी थे। इसी प्रकार, लड़कियों ने भी स्नातक होने के बाद शादी कर ली, उन्हें 'सद्योदवाह' कहा और कुछ आज्ञम ब्रह्मचारिणी रहीं, उन्हें 'ब्रह्मवादिनी' कहा गया। वह तपस्या जीवन का आनंद लेती थी और शास्त्र चर्चा में तल्लीन थी। गार्गी, मैत्रेयी ऐसी ब्रह्मवादिनी महिलाओं में उल्लेखनीय हैं।

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 7, Issue 8, August 2018

बेटे की तरह, बेटों के भी उपनयन संस्कार होते थे, जिन्हें शिक्षा की शुरुआत माना जाता था, लड़कियों की तरह, लड़कियों ने भी ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया। यद्यपि उनके लिए बच्चों की तरह कोई अलग गुरुकुल नहीं था, फिर भी महिला शिक्षा प्रचलित थी। वेदों के दौरान, माता-पिता की यह भी इच्छा थी कि उनकी बेटों पुजारी बनें। ऋग्वेद में, लोपामुद्रा, घोषा, सिकता, निववारी, विश्ववारा, आदि महिलाओं का उल्लेख है।

ऋग्वेद के पहले मंडल के 126 वें सूत्र के लेखक, रोमाशा को माना जाता है। संभवतः उनमें से कुछ शिक्षण कार्य भी करेंगे। उस समय महिलाएँ अपने पति के साथ यज्ञ में भाग लेती थीं। अतः, यह स्पष्ट है कि वैदिक मंत्रों के उचित पाठ के लिए, उन्हें वेधाय भी करना चाहिए।

ऋषि याज्ञवल्क्य की पत्नी मैत्रेयी उपनिषद् काल में परम विद्वान् थीं। वह धन से अधिक ज्ञान की कामना करती हैं। बृहदारण्यक उपनिषद् में उल्लेख किया गया है कि उसने याज्ञवल्क्य की दूसरी पत्नी कात्यायनी के पक्ष में अपने संपत्ति के अधिकार को छोड़ दिया था और अपने पति से केवल आत्मज्ञान के लिए प्रार्थना की थी।[22,23]

इसी प्रकार, बृहदारण्यक उपनिषद् में विदेह के राजा जनक की सभा में गार्गी और याज्ञवल्क्य के बीच उच्च स्तरीय दार्शनिक बहस का उल्लेख है। इसके अलावा, तैत्तिरीय संहिता और मैत्रायणी संहिता में उल्लेख किया गया है कि संगीत, नृत्य और अन्य ललित कलाओं को भी सिखाया गया था।

प्रकाश के अनुसार, वीरमित्रोदय के संस्कार प्राचीन काल में दो प्रकार की लड़कियाँ थीं, पहली ब्रह्मवादिनी। ये महिलाएँ जीवन भर वेदों का ज्ञान प्राप्त करती थीं। बृहदारण्यक उपनिषद् में दो ऐसे ब्रह्मवादियों का उल्लेख है।

1. याज्ञवल्क्य की पत्नी मैत्रेयी

2. गार्गी, जो याज्ञवल्क्य को पढ़ाती है। दूसरी बात यह है कि साधोवाहा ये महिलाएँ शादी से पहले तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करती थीं और शादी के बाद गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करती थीं।

वेद स्त्री को बहुत महत्वपूर्ण, गरिमापूर्ण, उच्च स्थान देते हैं। महिलाओं की शिक्षा का सुंदर वर्णन - वेदों में दीक्षा, शील, सदाचार, कर्तव्य, अधिकार और सामाजिक भूमिका दुनिया के किसी अन्य धर्मग्रंथ में नहीं मिलती है। वेद उसे घर की महारानी कहते हैं और देश का शासक बनने का अधिकार देते हैं, यहाँ तक कि पृथ्वी की महारानी भी। वेदों में, एक महिला बलिदान है, अर्थात् एक यज्ञ की तरह पूजा की जाती है। वेदों में, ज्ञान देने वाली महिलाएँ, सुख - समृद्धि, विशेष गौरव, देवी, विदुषी, सरस्वती, इंद्राणी, उषा - जो सभी को जागृत करती हैं, आदि को कई सम्मानजनक नाम दिए गए हैं। वेदों में महिलाओं पर कोई प्रतिबंध नहीं है - इसे हमेशा विजयिनी कहा गया है और उनके सभी कार्यों में सहयोग और प्रोत्साहन की बात की गई है। वैदिक काल के दौरान, महिलाएँ युद्ध के मैदान में शिक्षण से चली गईं। जैसा कि कैकेयी महाराज दशरथ के साथ युद्ध में गई थीं। लड़की को अपना पति चुनने का अधिकार देकर, वेद पुरुष से एक कदम आगे रखते हैं।

कई ऋषिक वेद मंत्रों के द्रष्टा हैं - अप्पला, घोषा, सरस्वती, सरपरगिनी, सूर्या, सावित्री, अदिति - दक्षिणायनी, लोपामुद्रा, विश्वमित्र, आत्रेयी आदि। हालांकि, वे, जो वेदों में भी नहीं गए थे, जिनमें से कुछ भी बुद्धिहीन हैं। इस देश की सभ्यता, संस्कृति को नष्ट - भ्रष्ट करने और नष्ट करने का अभियान चला - वेदों में महिलाओं की अवमानना की।

वैदिक काल के दौरान, महिला एक उच्च स्थिति में थी, वह लंबे समय तक स्थिर नहीं रह सकती थी। धर्मसूत्रों ने बाल विवाह का निर्देश दिया, [24] ताकि महिलाओं की शिक्षा बाधित हो और उनकी शिक्षा सामान्य स्तर पर आए क्योंकि उन्हें लिखने और पढ़ने के अवसर नहीं मिले, जिसके कारण वेदों के ज्ञान को असंभव

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 7, Issue 8, August 2018

बना दिया गया। उनके लिए धार्मिक समारोहों में भाग लेना वर्जित था। उसका मुख्य कर्तव्य अपने पति का पालन करना था। महिलाओं के लिए विवाह को अनिवार्य बनाया गया था। विधवा विवाह पर निषेध जारी किया गया था। बहुविवाह - प्रथा अधिक प्रचलित हो गई। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि महिलाओं की स्थिति वैदिक युग की तुलना में बाद के वैदिक काल में घटने लगी। स्मृति युग में, महिलाओं की स्थिति में अधिक अंतर था। स्मृति युग में, महिलाओं को केवल माता के रूप में सम्मान दिया जाता था, न कि पत्नियों के रूप में। इस युग में, विवाह की आयु को 12 या 13 वर्ष कर दिया गया था। शादी की उम्र कम होने के साथ शिक्षा कम होती गई। इस युग में महिलाओं के सभी अधिकार कम हो गए। स्मृतिकारों ने निर्देश दिया है कि किशोरावस्था के दौरान महिलाओं को स्वतंत्र नहीं रखा जाना चाहिए। एक महिला का परम कर्तव्य पति की परवाह किए बिना पति की सेवा माना गया। विधवाओं के पुनर्विवाह पर, गौहत्या निषेध लगाया गया था। सती को सर्वश्रेष्ठ माना जाने लगा।

मध्यकालीन भारत में स्त्री शिक्षा के बारे में जानकारी अपर्याप्त है। यद्यपि इब्रबतूता लिखते हैं कि "जब वह हानौर पहुँचा तो वहाँ उसने 23 ऐसे विद्यालय देखे जिनमें बालिकायें शिक्षा ग्रहण करती थीं। नगरों व बड़े घरानों की स्त्रियों के पढ़ने-लिखने के संकेत मिलते हैं किन्तु सामान्य परिवारों एवं ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा का स्तर नीचा था।" ¹¹ "भक्तिकालीन साहित्य में मीराबाई, गबरीबाई, दयाबाई, सहजोबाई का योगदान" ¹² एवं पातुरों द्वारा लिखा गया साहित्य ¹³ द्वारा स्त्रियों में शिक्षा के प्रसार के बारे में जानकारी मिलती है। भक्तिकाल का साहित्य सृजन लोकभाषा एवं मातृभाषा में होने के कारण स्त्रियों को पढ़ने-लिखने की प्रेरणा मिली। इस काल में नारी की स्थिति और भी बदतर हो गयी। कुल के रक्त की शुद्धता, नारी के सतीत्व की रक्षा और हिन्दू धर्म की रक्षा के नाम पर नारी को ऐसे सामाजिक-धार्मिक बंधनों में जकड़ दिया गया कि वह पुरुष की छायामात्र होकर रह गई और उसका स्वतंत्र अस्तित्व लुप्त हो गया। इस काल में स्त्री-शिक्षा समाप्त हो गई। पर्दा-प्रथा और सती प्रथा यहां तक कि मादा-शिशु की हत्या भी होने लगी। उत्तर भारत की तुलना में दक्षिण भारत में विदेशी आक्रमणों का प्रभाव कम था, इसलिए वहां बाल-विवाह, पर्दा-प्रथा और सती-प्रथा जैसी कुप्रथायें कम पनप सकीं। यद्यपि मध्यकालीन इतिहास में रजिया बेगम, चाँद बीबी, ताराबाई, अहिल्याबाई आदि वीरांगनाओं ने शासन संचालन में ख्याति प्राप्त की किन्तु इन चंद नारियों के उदाहरण से यह नहीं कहा जा सकता कि सामान्य स्त्री की स्थिति किसी भी तरह संतोषजनक थी। ¹¹ "11वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही भारतीय समाज पर उसके आपसी मतभेद एवं फूट के कारण मुस्लिमों का आधिपत्य हो गया था। उनके प्रतिदिन के बढ़ते वर्चस्व के कारण संस्कृति रक्षा एवं मनु स्मृति के नाम पर नारी के स्वतंत्र अस्तित्व का न केवल पूर्णतया: लोप हो गया वरन् उन्हें समाज की चाहरदीवारों में कैद कर दिया गया। लगातार आक्रमणों में भागीदारी, परिवार एवं समाज को सुरक्षा प्रदान करते रहने के कारण पुरुषों का गौरव बढ़ता चला गया।" ¹⁴ धीरे-धीरे स्थिति यह आयी कि सुविधा एवं सुरक्षा जुटाते रहने के कारण पुरुषों के वर्चस्व को समाज में मान्यता दे दी गई, नारियां मात्र भोग-विलास का पर्याय बन गयीं। उनका कार्य केवल सज-संवर कर पुरुषों की इच्छा पूर्ति करना अथवा उनके बच्चों की माँ बनकर उनकी देख-रेख करना रह गया। वे बाजार की एक बेजान वस्तु की भाँति हो गईं जिनकी हर सांस पर दूसरों का अधिकार था। [24]

निष्कर्ष

वैदिक काल में विवाह को एक पवित्र संस्कार माना जाता था। उस समय, विवाह को न केवल एक सामाजिक और धार्मिक कर्तव्य आवश्यक माना जाता था, बल्कि धार्मिक दृष्टि से यह अधूरा होता है और इसमें बलि की गतिविधियों में भाग लेने का अधिकार नहीं होता है। वैदिक साहित्य में ऐसी लड़कियों के उदाहरण भी हैं जो लंबे समय तक अविवाहित थीं या जीवन भर के लिए, ऐसी लड़कियों को अमाजू कहा जाता था। यद्यपि ऋग्वेद में किसी लड़की के विवाह की उम्र तय नहीं की गई है, लेकिन ऋग्वेद के दसवें मंडल से यह स्पष्ट है कि लड़की की शादी तब ही की गई थी जब वह बालिग थी।

बाद के वैदिक काल में महिलाओं के बीच स्वयंवर की प्रथा लोकप्रिय हो रही थी। इन उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि लड़की की शादी कम उम्र में हुई थी, शायद यह उम्र 16 से 20 साल के बीच रही होगी। बाद में, ब्राह्मण व्यवस्थावादियों ने सगोत्र, सपरिवार विवाह पर प्रतिबंध लगा दिया, लेकिन ऋग्वेद में इस विषय पर कोई स्पष्ट प्रतिबंध नहीं है। ऋग्वेद में केवल भाई-बहन और पिता-पुत्री का विवाह निषिद्ध है।

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 7, Issue 8, August 2018

ऋग्वैदिक काल में विवाह तभी होते थे जब वे वयस्क होते थे। अंतरजातीय विवाह अनुलोम विवाह ऋग्वेद में ब्राह्मण विमद और राजकन्या कामदु शतपथ ब्राह्मण से लेकर ऋषि च्यवन और सुकन्या, राजा अर्याति की बेटी के विवाह का उल्लेख है। प्रतिलोम विवाह के उदाहरणों में ऋग्वेद के दसवें मंडल में महर्षि शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी, राजा श्यावाचार्य और शाश्वती के राजा असंगा का उल्लेख है। इसी तरह, कुछ अंतर-जातीय विवाह के उदाहरण बाद के वैदिक काल में भी पाए जाते हैं। तैत्तिरीय संहिता में शतपथ ब्राह्मण में आर्यपुरुष और शूद्र नारी के संबंधों का उल्लेख है, राजा शर्याति की पुत्री ऋषि च्यवन और सुकन्या के विवाह का उल्लेख है।

उत्तर वैदिककाल में कुछ लोगों द्वारा एक लड़की के मूल्य के उदाहरण हैं। लेकिन इसे अच्छी नजर से नहीं देखा गया। वैदिक काल में आमतौर पर पत्नी का प्रचलन था। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि वैदिक साहित्य में बहुपतित्व के कई उदाहरण पाए जाते हैं, जिनमें समाज में उच्च और धनी पुरुष अधिक पत्नियाँ रखते हैं। राजा हरिश्चंद्र की 100 पत्नियाँ थीं, जिनका उल्लेख ऐतरेय ब्राह्मण ने किया था। मनु ने मैत्रायणी संहिता में 10 पत्नियों का उल्लेख किया है। प्रसिद्ध दार्शनिक याज्ञवल्क्य की दो पत्नियाँ थीं।

उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट है कि वैदिक काल में ज्ञान समाज के उदय में महिला शिक्षा ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। [23,24] जहाँ आधुनिक समाज और स्वतंत्रता के इतने वर्षों के बाद भी हम पुरुषों की तरह ही स्त्री शिक्षा में भी शत-प्रतिशत दूरी नहीं पा सके हैं, जबकि जब हम वैदिक काल को देखते हैं, तो हजारों साल पहले का समाज है। और भी समृद्ध। दिखाई दे रहा है जो जीवन को व्यर्थ नहीं मानता है, लेकिन एक प्रवृत्ति-उन्मुख है जो जीवन के प्रति आशावादी और मेहनती है। उनकी प्रार्थनाएं ऐसी हैं जो पुरुषों के भीतर उत्तेजना पैदा करती हैं, उनकी प्रार्थना लंबे जीवन, स्वस्थ शरीर, जीत, खुशी और समृद्धि के लिए प्रार्थना की गई थी। वैदिक काल में, समाज में रहने वाली हर जाति, वर्ग, वर्ग और महिला को भी हर क्षेत्र में पर्याप्त स्वतंत्रता मिली। वैदिक समाज में हमें पर्याप्त सामाजिक गतिशीलता देखने को मिलती है। यही कारण है कि वैदिक युग की महिलाएं अभी भी महिलाओं के लिए आदर्श बनी हुई हैं। निष्कर्ष में यह कहा जा सकता है कि वैदिक युग में महिलाओं की स्थिति संतोषजनक थी। समाज में महिलाओं का सम्मान किया जाता था और सामाजिक और राजनीतिक जीवन में महत्वपूर्ण स्वतंत्रता का आनंद लिया जाता था। ऋग्वेद में, पति और पत्नी को एक ही तत्व के दो भागों के रूप में मानते हुए, प्रत्येक क्षेत्र में समान माना जाता है। इसलिए, दोनों को हमेशा समान रूप से भाग लेना चाहिए चाहे वे धार्मिक हों या अधार्मिक। इसलिए यह कहा जा सकता है कि तत्कालीन दुनिया के किसी भी साहित्य में महिलाओं को पुरुषों के साथ समानता के उतने अधिकार नहीं दिए गए हैं जितने वैदिक साहित्य में दिए गए थे।

इस अध्ययन से साबित होता है कि वैदिक कालानुसार समाज एक प्रगतिशील, आशावादी समाज था जहाँ पुरुष और महिला को समान दर्जा प्राप्त था। प्रगतिशील शिक्षा प्रणाली वैदिक युग की प्रगति के लिए जिम्मेदार थी। प्राचीन शिक्षा का उद्देश्य शिष्य का सर्वांगीण विकास करना, उसकी ज्ञान ज्योति को जगाना, उसे दृढ़ बनाना और उसके जीवन को पूरी तरह से भाग्यशाली बनाना था। मध्यकाल में अनेकों सामाजिक कुप्रथाओं परदा प्रथा, बाल विवाह, वेश्यावृत्ति, विधवा दुर्दशा, तलाक, दहेज प्रथा आदि के कारण महिलाओं की स्थिति गौण व इसका जीवन संरक्षण का जीवन बन कर रह गया था। मुसलमानों की तुलना में हिन्दू महिलाओं की शिक्षा की कम सुविधा प्राप्त थी। मध्यकाल में स्त्रियों की शिक्षा की प्रगति शासकों एवं समृद्ध लोगों के संरक्षण में धीमी गति से हुई। शासकों एवं अन्य शिक्षाप्रेमी व्यक्तियों ने महिला शिक्षा को बढ़ावा देने का प्रयास किया। हिन्दू और मुस्लिम स्त्रियों ने धार्मिक और उच्च प्रकार की साहित्यिक कृतियों में रूचि ली। [24]

संदर्भ

1. रतिभानु सिंह नाहर: पूर्व-मध्ययुगीन सभ्यता और संस्कृति, पेज नंबर 683, 685।
2. ऋग्वेद, अथर्ववेद, यजुर्वेद और महाभारत से
3. वी. डी. शुक्ला: पूर्व-मध्यकालीन संस्कृति और जीवन, पृ. 304 और पी. 309

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(A High Impact Factor, Monthly, Peer Reviewed Journal)

Visit: www.ijirset.com

Vol. 7, Issue 8, August 2018

4. वासुदेवशरण अग्रवाल: भारतीय संस्कृति , पृष्ठ 96 और पृष्ठ 98
5. डॉ. एस कपूर: भारत में पुनर्जागरण , पृष्ठ संख्या 36 , 37 ।
6. कालीशंकर भटनागर: भारतीय संस्कृति का इतिहास , पृष्ठ संख्या 38, 301 , 308 ।
7. पी . वी . केन: धर्मशास्त्र का इतिहास , भाग - 1,
8. महिला स्वतंत्र - मनुस्मृति - 4 / 3
9. त्रिपाठी , कुसुम , महिलाओं की दशा और दिशा। कुरुक्षेत्र। अंक , मार्च 2010 ।
10. महिला , अरविंद और सुरेंद्र कटारिया - भारत में महिला सशक्तिकरण: प्रयास और बाधाएँ , मलिक एंड कंपनी। जयपुर। 2013. पी। 262 ।
11. दिनकर , रामधारी सिंह। संस्कृति के चार अध्याय
12. विमल कुमार , रामधारी सिंह दिनकर की रचना।
13. द्विवेदी , कपिल देव , वैदिक साहित्य और संस्कृति
14. गोयल , प्रीतिप्रभा , भारतीय विरासत
15. वैदिक साहित्य और संस्कृति , पृष्ठ संख्या 257-58
16. कुमार , कमलेश भारत की आदिवासी महिलाएं , कुरुक्षेत्र , 23 मार्च 2007, पृष्ठ संख्या 23 ।
- 17 पांडेय , प्रबंधक भारतीय समाज में प्रतिरोध की परंपरा , नई दिल्ली , 2013. पी। 9
18. टॉमस , मूर। आदर्शलोक
19. लेम्बी आरएच , सामाजिक संगठन लंदन , रैटलेज 1950
20. महाभारत १२/३३ ९ / ६
21. ऑल्टकर ए . एस . , प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति , संशोधित संस्करण 196.
22. विद्यालंकार सत्यकेतु , प्राचीन भारत का धार्मिक , सामाजिक और आर्थिक जीवन
23. अत्रि स्मृति , 4.140.41
24. पांडा प्रमोदिनी , वेद कालिन नारी शिक्षा , ओरिएंटल बुक सेंटर , दिल्ली।